PARIPEX - INDIAN JOURNAL OF RESEARCH | Volume - 10 | Issue - 11 | November - 2021 | PRINT ISSN No. 2250 - 1991 | DOI : 10.36106/paripex

ORIGINAL RESEARCH PAPER

History

प्राचीन भारत में सांस्कृतिक जीवन में महिलाओं की भूमिका का ऐतिहासिक अध्ययन

KEY WORDS: नारी शिक्षा, प्राचीन भारत, नारी अधिकार, नारी स्थिति।

प्रो. डॉ. कमलेश शर्मा शोध निर्देशिका वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा ।

प्रभावती मालव शोधार्थी, इतिहास वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा ।

ABSTRACT

प्राचीन भारत में युग के आरम्भ में नारी की सृजनात्मक भूमिका प्रदर्शित होती है, नारी पुरूषों के समान ही अधिकारों का उपयोग करती थी। इसी युग में कांस्य प्रतिमा (नृत्यांगना) से नारी की मनोरंजन में सहज प्रवृत्ति का आभास होता है। ऋग्वैदिक काल में नारी की स्थिति सम्मानीय व श्रेष्ठ थी। इसी युग में नारियों के विदुषी होने के प्रमाण भी है, जो यह सिद्ध करते हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में उपेक्षित न थी। ऋग्वेद काल में दहेज का उल्लेख मिलता है परन्तु वर्तमान की तरह भयावह नहीं था। उत्तर वैदिक काल में नारियों की स्थिति का पतन होने लगा और समाज में पत्नी से कठोर अनुशासन व त्याग की अपेक्षा की जाती थी। मनुस्मृति में नारी को देवी का स्थान भी दिया है किन्तु स्त्रियों की दासता का सिद्धान्त भी दिया है। स्मृति व धर्मसूत्र काल में नारी को सम्पत्ति के अधिकारों से पूर्णतया वंचित कर दिया गया था। उपनयन संस्कार से वंचित करना, महिला शिक्षा के पिछड़ेपन को प्रदिर्शत करता है जो इस काल में हुआ। मौर्य युगीन भारत में नारी की स्थिति विवादास्पद रही, वहीं गुप्तकाल में नारी की राजनीति एवं शासन को दृढ़ता से चलाने में विशेष रूचि प्रदर्शित होती है। पूर्व मध्यकाल में उन स्त्रियों का महत्वपूर्ण स्थान था जो पत्नी की अर्हताओं से युक्त थी।

प्रस्तावना –

प्रागेतिहासिक युग में नारी एवं पुरूष की समान साझेदारी थी। नारी की प्रजनन क्षमता के कारण उसे सृजनात्मक शक्ति का द्योतक माना जाता था। सिन्धुघाटी संस्कृति से प्राप्त नारी मूर्तियों से नारी को, सृष्टि धारण करने वाली ही नहीं अपितु पालन करने वाली भी माना गया है। वैदिक काल में नारियों की शिक्षा के लिए समुचित प्रबन्ध थे। समाज में दाम्पत्य सम्बन्ध का बहुत महत्व था। महाकाव्य एवं स्मृतिकाल में बाल विवाह, अशिक्षा, विधवा विवाह निषेध के कारण स्थिति सम्मानजनक नहीं थी।

महाभारत काल में नारी, पुरूष दोनों के कर्मक्षेत्र भिन्न थे। नारी को पत्नी के रूप में निजी सम्पत्ति समझ उसका शोषण किया जाता था। समाज में नियोग प्रथा प्रचलित थी। पूर्व मध्यकाल में नारी की दशा पूर्ववर्ती युगों की अपेक्षा सर्वाधिक संक्रमणशील थी। गुप्तकाल में नारी का राजनीति एवं प्रशासन में भूमिका का उल्लेख मिलता है।

सांस्कृतिक जीवन में महिलाओं की भूमिका –

प्रागेतिहासिक युग में समाज में नारी एवं पुरूष की समान साझेदारी थी। मनुष्य अपनी आदिम अवस्था में था। संस्कृति का पूर्ण रूप से विकास नहीं हुआ था। पुरूष और स्त्री शिकार करके पहल कच्चा फिर अग्नि का आविष्कार होने के बाद पका कर खाते थे। महिलाएँ शिकार भी करती थीं और उसे पकाने का कार्य भी करती थीं। नारी पुरूष के समान ही अपने अधिकारों का उपयोग करती थीं। नारी की प्रजनन क्षमता के कारण उसे सृजनात्मक शक्ति का द्योतक माना जाता था। सांकलिया के प्रागेतिहासिक अन्वेषणें के आधार पर मिर्जापुर क्षेत्र में बेलन घाटी से प्राप्त नारी मृण्मूर्ति मातृदेवी सी लगती है।

भारत की प्राचीनतम संस्कृति सिन्धु घाटी की संस्कृति को राखाल दास बनर्जी, सर जान मार्शल, दयाराम साहनी आदि ने रेखांकित किया। यहाँ उत्खनन के अवशेषों में मिट्टी की अनेक नारी प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं। इन मूर्तियों में वक्ष और उदर का भाग असंतुलित रूप से उभरा हुआ दिखाया गया है। अनका उन्नत वक्ष एवं उदर नारी की सृजनात्मक शक्ति का द्योतक होगा। नारी को सृष्टि को धारण करने वाली ही नहीं अपितु पालन करने वाली भी माना गया। मातृदेवी की प्रसन्नता के लिए प्रतिमा पूजन का विधान प्रचलित किया गया होगा। इसी कारण यह प्रत्येक घर के अवशेषों में प्राप्त हुई। एक कांस्य प्रतिमा नृत्यांगना की भी प्राप्ति हुई है।

मुहरों पर एक प्रधान देवी उत्कीर्ण है और उनके सामने एक व्यक्ति बलि देने का उद्यत है। सात अन्य देवियाँ भी उपस्थित हैं जो उपशक्तियाँ रही होंगी। दूसरी मुद्रा पर स्त्री के पैर ऊपर हैं और स्त्री के गर्भ से वनस्पति का जन्म प्रदर्शित किया गया है। मातृदेवी की परिकल्पना, परम् शक्ति के रूप में प्रदर्शित की गई है जिसमें मानव, पशु एवं वनस्पतियों को जन्म देने वाली प्रदर्शित किया गया है। एक अन्य मुद्रा में वृक्ष की दो शाखाओं के बीच खड़ी एक नारी को वनस्पति देवी बताया है। यह सभी मुद्रा, नारी की सृजनात्मक भूमिका प्रदर्शित करते हैं।

सैंधव सभ्यता से प्राप्त नारी मूर्तियों से यह स्पष्ट होता है कि यहाँ पर नारियों की प्रधानता एवं मातृ सत्तात्मक समाज था। साथ ही यह तथ्य भी उजागर होता है कि इस काल में नारियों को पुरूषों के समान स्तर प्राप्त था।

वैदिक काल में नारियों की स्थिति सम्माननीय एवं श्रेष्ठ थी। वैदिककालीन आर्य नारियों का अत्यधिक सम्मान करते थे। उस काल में नारियों की शिक्षा के समुचित प्रबन्ध थे। ऋग्वैदिक काल में नारियों के विदुषी होने के अनेक प्रमाण हैं। उन्होंने अनेक ऋचाओं की रचना की। वह ब्रह्मवादिनी और मंत्र दृष्टा भी थी। विश्ववरा, अपाला, शंची, अदिती आदि ने मंत्रों की रचना कर ऋषि पद प्राप्त किया। शिक्षा के क्षेत्र में नारी उपेक्षित न थी। वह शिक्षिका का पद योग्यता द्वारा प्राप्त करती थी।

वैदिक आर्यों की दृष्टि में दाम्पत्य सम्बन्ध को अत्यन्त कोमल सम्बन्ध माना जाता था। माता–पिता की सहमति से होने वाला विवाह आदर्श माना जाता था। स्त्री–पुरूष दोनों ही परस्पर पति–पत्नी के चुनाव के लिए स्वतंत्र थे।

ऋग्वेद में दहेज का उल्लेख भी मिलता है। परन्तु यह प्रथा वर्तमान कुरूप रूप में समाज में प्रचलित न थी। एक विवाह को ही आदर्श जीवन का आधार माना जाता था। उत्तर वैदिक काल में भारत में विवाह के विभिन्न रूप प्रचलित थे। कन्या का विक्रय, उपहरण करके भी कन्या से विवाह किया जाता था। बहुविवाह की प्रथा भी समाज में प्रचलित थी। अनेक मंत्रों से बहुपत्नी प्रथा के संकेत मिलते हैं। विधवा विवाह एवं नियोग का प्रचलन था। पर्दा प्रथा की परम्परा समाज में नहीं थी। पत्नी को अपने घर में गृहस्वामिनी का दर्जा मिला हुआ था। सभी धार्मिक कृत्यों में पत्नी भाग लेती थी। पत्नी के बिना यज्ञ की क्रिया अधूरी मानी जाती थी।

महाकाव्य काल तथा स्मृति काल में नारियों की स्थिति में परिवर्तन आ गया। उत्तर वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति बाल–विवाह, अशिक्षा, विधवा विवाह–निषेध आदि नियमों के कारण सम्मानजनक नहीं रही। रामायण काल में स्त्रियों को शिक्षा दी जाती थी। पर्दे का प्रयोग अधिक नहीं था। यज्ञ व संध्योपासना भी करती थी। सैनिक शिक्षा भी यदा–कदा दी जाती थी। क्योंकि कैकयी को अपने पति के साथ युद्ध में जाते हुए बताया गया। किन्तु उसे बराबर की भागीदारी प्राप्त नहीं थी। समाज में पत्नी के कठोर अनुशासन व त्याग की अपेक्षा की जाती थी। पतिव्रता एवं साध्वी नारियों की प्रशंसा इस साहित्य में उपलब्ध है।

इस युग में नियोग की प्रथा थी। जब ऋषि परशुराम ने क्षत्रियों का नाश कर दिया तो क्षत्राणियों ने नियोग द्वारा ब्राह्मणों से सम्बन्ध कर अपना वंश चलाया। नारी का समानता का अधिकार नहीं था। भीष्म ने स्त्रियों के प्रति उच्च आदर भाव को प्रदर्शित करते हुए कहा था कि सदैव पूज्य मानकर उससे स्नेहपूर्ण व्यवहार करना आवश्यक है। इसी पर्व के एक स्थान पर युद्धिष्ठिर ने भीष्म पितामह से स्त्रियों की प्रकृति के बारे में जानने की इच्छा की तब भीष्म ने बताया कि स्वभाव से स्त्री में लालच को दबाने की क्षमता नहीं होती और इसलिए उसे सदैव किसी पुरूष का संरक्षण मिलना आवश्यक होता है। स्त्रियों के दो प्रकार बताये गये हैं – साध्वी और असाध्वी। साध्वी स्त्रियाँ पृथ्वी की माता और इसकी संरक्षिका है जबकि असाध्वी स्त्रियाँ अपने दुष्ट व्यवहार से कहीं भी पहचानी जा सकती है।

भारत में दो सुधारवादी धर्मों के उद्भव से स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन आया। बौद्ध धर्म में स्त्रियों को अत्यधिक सम्मानित पद प्राप्त था। इस समय अनेक स्त्रियाँ भिक्षुणी बनकर सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य में ही व्यतीत करती थी। जैन धर्म में भी स्त्रियों को आत्मसंतोष मिला तथा साध्वी बनने का गौरव प्राप्त किया। स्मृतिकाल में नारियों की दशा का स्तर गिरा एवं मनुस्मृति द्वारा नारियों की स्वतंत्रता पर अंकुश लगा दिया गया। इसी ग्रंथ में नारी को देवी का स्थान भी दिया, किन्तु स्त्रियों की दासता का सिद्धान्त भी दिया है।

भारतीय नारी ने जीवन को संस्कारों से परिपूर्ण एवं संतान को योग्य बनाने की जिम्मेदारी का प्रयास हर युग में किया है। मौर्ययुगीन भारत में नारी की स्थिति इस तरह विवादास्पद थी। स्त्रियों को अनेक बंधनों में बांध दिया गया था। घर की चार दीवारी तक सीमित थी। बहु विवाह प्रथा विद्यमान थी। व्यभिचारी, प्रवासी, पतित, राजद्रोही एवं नपुंसक पतियों का स्त्री परित्याग कर सकती थी।

पुरूष स्त्रियों का वध कर दिया करते थे इसके लिए समाज में राजकर्मचारी एवं अन्य के लिए दण्ड व्यवस्था का प्रावधान था, नारी हत्या को ब्रह्म हत्या के समान अपराध घोषित किया गया था।

इसी काल (मौर्ययुगीन काल) में स्त्रियों की स्थिति साहित्य मात्र से प्रमाणित नहीं होती अपितु अभिलेख, गुफाओं, स्तूप और चैत्य आदि पर उत्कीर्ण चित्र आदि में तत्कालीन समाज की झांकी मिलती है।

स्मृतियों एवं धर्मसूत्र काल में साहित्य द्वारा नारी की स्थिति की प्रमाणिकता सिद्ध होती है। उनके लिए वेद अध्ययन और यज्ञ करने पर प्रतिबंध लगाया गया। उसे उपनयन संस्कार से वंचित कर दिया गया। नारियों का एक मात्र धर्म घर–परिवार संभालना रह गया। विधवा विवाह पूर्ण निषेध हो गया।

स्त्री की स्वतन्त्रता पर पूर्ण अंकुश लगा दिया गया। बाल विवाह एवं शिक्षा के अभाव ने आत्मज्ञान के अवसर छीन लिये गये। आजीवन पिता, पति, पुत्र के सानिध्य में रहने को मजबूर थी स्त्री कभी स्वयं स्वतंत्र रहने योग्य नहीं है। इस काल में स्त्रियों को मानसिक रूप से अयोग्य तथा दुर्बल सिद्ध करने के लिए भ्रमपूर्ण प्रचार किए जाने लगे। स्त्रियों को सम्पत्ति के अधिकारों से पूर्णतया वंचित कर दिया गया। सामाजिक विकृति और धार्मिक संकीर्णता नारी पर हावी थी। दूसरी से पाँचवी शताब्दी के बीच बनने वाली व्यास स्मृति ने नारी को नौकरानी का दर्जा दिया।

समाज में अराजकता, अस्थिरता एवं विदेशी आक्रमणों के कारण महिलाओं की स्थिति पर दुष्प्रभाव पड़ा। इन्हें आरम्भ से ही बंधनों में रखा गया। किन्तु इनके संस्कारों, रीति–रिवाजों ने जीवन के संघर्षपूर्ण उत्तरदायित्व को धारण किया। सामाजिक सामंजस्य में भी उनकी भूमिका प्रशंसनीय रही। इन्हें नगरवधु, विषकन्या एवं वैश्या का जीवन भी व्यतीत करना पड़ता था। पुरूष समाज का वर्चस्व एवं पितृ सत्तात्मक परिवार के कारण था।

पूर्व मध्य काल में नारी की दशा पूर्ववर्ती युगों की अपेक्षा सर्वाधिक संक्रमणशील थी। यद्यपि गृहस्थाश्रम में एक पत्नी के रूप में उसकी प्रतिष्ठा थी। धर्म, अर्थ और काम की उपलब्धता का आधार पत्नी मानी जाती थी। पत्नी से यह अपेक्षा रखी जाती थी कि वह व्यवहार कुशल, विनम्र, मृदुभाषिणी, सेवारत, शील और सन्तान–सम्पन्न आदि हो। पत्नी के रूप में उसका स्थान पति से निम्न था। दक्ष व व्यास के अनुसार उपरोक्त अर्हताओं से सम्पन्न पत्नि केवल 'महान' पुण्य कर्मों से ही उपलब्ध होती है। स्त्रियों को घरेलू कार्यों में प्रायः व्यस्त रखा जाता था। घर से बाहर समाज में उसकी विशेष स्थिति नहीं थी। परिवार में उन स्त्रियों का महत्वपूर्ण स्थान था, जो पत्नी की अर्हताओं से युक्त थी। गुण सम्पन्न संस्कार–युक्त पत्नी को भाई के समान स्थान प्राप्त था। पत्नी के रूप में उसका कार्य आय–व्यय और घर की देख–रेख, स्वच्छता, भोजन बनाना, विवाहाग्नि या गृहाग्नि की सुरक्षा आदि था।

राजनीतिक क्षेत्र में नारी की भूमिका –

प्राचीन युग में साधारण नारी समाज में अपने परिवार के प्रति उत्तरदायित्व से दबी हुई थी। उसे स्वतंत्रता एवं शैक्षणिक अधिकारों से वंचित किया हुआ था। उसका क्षेत्र गृहस्थी तक सीमित हो गया था। राजनीतिक क्षेत्र से नारी का कोई सरोकार नहीं था। इस युग में प्रतीक स्वरूप कुछ ही उदाहरण ऐसे स्त्रियों के मिलते हैं जिनकी प्रशासन से सम्बद्धता रही थी। सामान्य वर्ग की स्त्रियों का इसमें प्रवेश करने का कोई अवसर नहीं था, केवल राज परिवारों की स्त्रियाँ ही इसमें भाग लेती थीं। राजघरानों में बाल्यावस्था से ही राजकुमारों के समान ही राजकुमारियों को राजनीति की पूर्ण शिक्षा दी जाती थी। राजनीति की यह शिक्षा, राजकुमारियों को शासन का कार्यभार सम्भालने में समर्थ बनाती थी। सातवीं शती में उत्तर भारत के दो स्त्री राज्यों का उल्लेख चीनीयात्री हुएन–साँग ने किया है। इनमें से एक पूर्व की ओर तथा दूसरा पश्चिम की ओर था जिन्हें ''पूर्वी स्त्री राज्य'' तथा ''पश्चिमी स्त्रियों का देश'' कहा जाता था। इन राज्यों में प्रत्येक की अपनी सरकार थी।

प्राचीनकाल में स्त्रियों की राजनीति एवं शासन को दृढ़ता से चलाने में विशेष रूचि हुआ करती थी। गुप्तकाल में नारियाँ शासन कार्य में सहयोग देती थी। चन्द्रगुप्त प्रथम के सिक्कों पर महादेवी कुमार देवी के चित्र का अंकन इस बात का प्रतीक है। इसी प्रकार चन्द्रगुप्त द्वितीय की पुत्री प्रभावती गुप्त ने अपने पति बाकाटक नरेश रूद्रसेन द्वितीय के निधन पर अपने पुत्र प्रवरसेन द्वितीय की अल्प व्यस्कता के कारण संरक्षिका के रूप में राज्य किया था। रानियाँ राज्य संचालन के साथ युद्ध में वीरता का प्रदर्शन भी करती थीं। 8वीं शती में दाहिर की बहिन रानी बाई ने अरब जनरल मोहम्मद बिन कासिम से युद्ध किया था और पति की युद्धक्षेत्र में वीरगति पा जाने के पश्चात् पराजित होने की आशंका से अग्नि में प्रवेश कर अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया था। सामान्य वर्ग की स्त्रियाँ भी संभवतः सैनिक होती थी, युद्धक्षेत्र में जाती थी। इसकी पुष्टि खजुराहो की मूर्तिकला से होती है। विश्वनाथ मंदिर के बाएँ बाह्य भाग में उत्कीर्ण एक दृश्य में एक स्त्री शस्त्रों से सुसज्जित दिखाई दे रही है, संभवतः वह पुरूष के साथ युद्ध क्षेत्र में जा रही है। एक अन्य स्त्री बाएँ हाथ में बड़ी सी तलवार लिए खड़ी है और दाहिने हाथ से तलवार का ऊपर भाग पकड़ा हुआ है यह दृश्य दूल्हादेव मंदिर के पिछले बाह्य भाग में उत्कीर्ण है। इन दृश्यों से स्पष्ट हो जाता है कि राजा स्त्रियों की सैनिक टुकड़ियाँ भी रखते थे जो निश्चित रूप से आपत्तिकाल में सहयोग देती थीं। भोज का ग्वालियर अभिलेख भी स्त्री सैनिक टुकड़ी की पुष्टि करता है।

आर्थिक क्षेत्र में नारी की भूमिका –

प्राचीन काल के आरंभ से महिलाओं का परिवार में आर्थिक योगदान रहा है। लेकिन विभिन्न–विभिन्न वर्ग की महिलाओं की आर्थिक क्षेत्र में भूमिका पृथक–पृथक है। उच्च वर्ग की स्त्रियाँ पुरूष के साथ आर्थिक कार्यक्रम में घर के बाहर सम्मिलित नहीं हो पाती थी। केवल निम्न वर्ग की स्त्रियाँ कुटीर उद्योगों में अपने पति की सहायिका होती थी। जैसा कि विष्णु के कथन से प्रतीत होता है कि चरवाहे, सुराकार, नटकार, धोबी, आखेटक की पत्नियों द्वारा लिया गया ऋण उनके पति को देना पड़ता है क्योंकि उनकी पत्नियाँ उनके उद्योग में सहायिका होती है। याज्ञवल्क्य द्वारा दिए गए इसी प्रकार के निर्देश (2.48, पृ. 206) का समर्थन अपरार्क और मिताक्षरा में भी किया गया है। नारियों द्वारा दुकान चलाने और कृषि कार्य में सहयोग देने का उल्लेख साहित्य में भी मिलता है। कादम्बरी में प्रतिहारी, ताम्बूलकरंग वाहिनी और चंवर ढुलाने वाली सेविकाओं का उल्लेख मिलता है। कामन्दकीय नीतिसार में स्त्रियों को निवास में कर्मचारिणी नियुक्त करने का निर्देश दिया गया है। कथासरित्सागर में एक स्थल पर एक स्त्री गुप्तचर का भी उल्लेख किया गया है।

साहित्य में यदा–कदा वणिकों द्वारा लाभार्थ अपनी पत्नी के दुरूपयोग का भी उल्लेख मिलता है, जो पतनोन्मुख समाज का निम्न चित्र उद्घाटित करता है। सोमदेव अर्थलोम नामक व्यापारी के बारे में लिखता है कि, उसकी पत्नी मानपरा उसके निर्देश पर अपनी इच्छा के प्रतिकूल विवश होकर अपने मधुर रूप, भाषण, व्यवहार से मनुष्यों को आकृष्ट कर व्यापार चलाया करती थी।

नारी का धार्मिक क्षेत्र में स्थान –

प्राचीन युग में नारी के प्रति धार्मिक दृष्टिकोण को लेकर दो विरोधी धारणाएँ समाज में प्रचलित थी। एक ओर पम्परागत हिन्दू सामाजिक विचारकों ने नारी को धर्म सम्बन्धी अधिकारों से वंचित कर दिया था। इस विचारधारा का मेघातिथि तथा कुल्लुक ने समर्थन किया है। स्मृति चन्द्रिका और कृत्यकल्पतरू ने विष्णु को उद्धृत करते हुए लिखा है कि, पति की जीवितावस्था में व्रतोपवास करने वाली नारी पति की आयु का क्षय करती है और नरकगामी होती है। प्रायः सभी परवर्ती स्मृतियों ने नारी के लिए व्रत, उपवास, तपादि को निषिद्ध कर दिया और पति सेवा को ही उसकी परमगति का साधन और नारी–धर्म बताया। पराशर माधवीय ने भी इसी धारा का समर्थन और अनुमोदन किया है। इस सन्दर्भ में उसने मार्कण्डेयपुराण, शंखलिखित, कात्यायन आदि का उद्धरण देते हुए नारी के सधवावस्था में अलग से किए जाने वाले धर्म कार्यों को निष्फल माना है। साहित्य में भी ऐसे उदाहरण उपलब्ध हैं।

इस विचारधारा के विपरीत दृष्टिकोण तंत्रवाद से प्रभावित वाममार्गी और

सहजीया विचारधारा के अन्तर्गत विभिन्न धर्म सम्प्रदायों से सम्बद्ध शाखाओं में विकसित हुआ है, जिसने खुलकर स्त्रियों को दीक्षा देने और ग्रहण करने तथा सन्यस्त होने का अधिकार प्रदान किया। समय मातृका में विवृत है कि मृगवती नामक वैश्या पहले शाक्त मठ में प्रवेश करती है और भैरव सोम से दीक्षा लेकर शिखा नाम धारण करती है। मालती माधव में लाल परिधान युक्त, कामन्दीकी और उसकी शिष्या अवलोकिता का बौद्ध भिक्षुणियों के रूप में उल्लेख है। इसी ग्रंथ में कपाल कुण्डला और उसके गुरू उपधोरघंट द्वारा मालती को बलि देने का विवरण है।

ग्रंथ में बौद्ध भिक्षुणी कामन्दीकी मंत्री भूरिवसु को सहपाठी बताते हुए कहती है कि विद्याध्ययन के लिए हम लोगों का अनेक दिगन्तों में वास और साहचर्य था। कर्पूर मंजरी में भरवानन्द का कथन है कि 'रण्डा अर्थात् विधवा, चण्डा अर्थात् क्रूरा और तान्त्रिक शिक्षा में दीक्षित स्त्रियाँ ही हमारी पत्नियाँ है। इसी ग्रंथ में राजकुल की रानी द्वारा दीक्षा गण किए जाने का उल्लेख है। दशकुमारचरित में बौद्ध संन्यासिनी द्वारा कुटनी–कार्य करने का भी विवरण है। कथा सरित्सागर में कालरात्रि नामक ब्राह्मणी की चर्चा की गई है। जो भैरव की पुजारिन है और सिद्धि प्राप्त करने की दीक्षा देती है। देवी भागवत पुराण में नारियों के लिए आजीवन कौमार व्रत की चर्चा की गई है। कथा सरित्सागर में भी इस प्रकार की ब्रह्मचारिणी नारियों का उल्लेख है।

सामाजिकता के प्रति सजग विचारकों ने गृहस्थ नारियों को इस प्रकार की भिक्षुणी और संन्यासिनियों के सम्पर्क से दूर रहने का निर्देश दिया है।

संदर्भ

1) "दांसपंए भ्ण्क्ण ;1978द्धए च्तम.भ्पेजवतपब ।तज पद प्दकपंए च्हण 8ए ब्तवसपदं ।बंकमउपब च्तण ;श्रनदम 1ए 1978द्ध
2) "दांसपंए भ्ण्क्ण ;1978द्धए च्तम.भ्पेजवतपब ।तज पद प्दकपंए च्हण 29ए ब्तवसपदं ।बंकमउपब च्तण ;श्रनदम 1ए 1978द्ध
3) "दांसपंए भ्ण्क्ण ;1978द्धए च्तम.भ्पेजवतपब ।तज पद प्दकपंए च्हण 31ए ब्तवसपदं ।बंकमउपब च्तण ;श्रनदम 1ए 1978द्ध
4) डंरनउकंतए त्ण्ब्ण ;1982द्धए ।दबपमदज प्दकपंए च्हण 32ए डवजप रंस ठंदंतेप कें ;1982द्ध
5) ऋग्वेद 10.27.2
6) ऋग्वेद 1.109.2
7) तैत्तरीय संहिता 2.3.4.1; मैत्रायणी संहिता 1.10.11
8) ऋग्वेद 1.162.11; 1.71; 7.26.3; 10.145.3–4
9) ऋग्वेद 10.42.2; 10.18.8
10) रामायण 2.20.25
11) रामायण 4.16.12
12) रामायण 2.9.15–16
13) महाभारत, अनुशासन पर्व, 43, 5
14) महाभारत, अनुशासन पर्व, 46, 14
15) महाभारत, अनुशासन पर्व, 43, 19, 2
16) कौटिल्य का अर्थशास्त्र – ''नीचत्वं परदेश वा प्रस्थतो राज कितिवषी प्राणा भिहन्ता पतितास्याज्येक्लीवोपिता पतिः।
17) कौटिल्य का अर्थशास्त्र (4.10.1)
18) मनुस्मृति 9, 3 ''पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने, रक्षान्तिस्या विरे पुत्रा नस्त्री स्वातत्यमर्हति।
19) व्यासस्मृति : 2, 27 ''दासी वदिष्ट कार्येषु भार्या भर्तु : सदा भवेत।''
20) दक्ष स्मृति, 4.1, पृ. 70 तथा व्यव. का, पृ. 522 पर उद्धत दक्ष।
21) स्मृ.च, व्यव.का., पृ. 523
22) स्मृ.च., व्यय. का. पृ. 524
23) स्मृ.च., व्यय. का. पृ. 523
24) बृहस्पति, 24.4, कृत्य. व्यय. का, पृ. 608 पर भी उद्धत।
25) क
26) क
27) क
28) कुल्लुक, 5.162 एवं सति पुन–र्भूत्वमपि प्रतिषिद्धम्।
29) समय मातुका, 2.45
30) विक्रमांक देवचरित, 14.29, पृ. 19
31) कादम्बरी, पृ. 45
32) कामन्दकीय नीतिसारऋ 7.44
33) कथासरित्सागर, खण्ड 1, पृ. 35
34) कथासरित्सागर, खण्ड 1, पृ. 199–200
35) मेघातिथि, 5.153, पृ. 558
36) कुल्लुक, 5.155
37) क
38) क
39) क
40) क
41) समयमातुका, 2.43, व 58
42) मालतीमाधवम्, प्रथम अंक, पृ. 18
43) मालतीमाधवम्, प्रथम अंक, पृ. 22
44) मालतीमाधवम्, प्रथम अंक, पृ. 22
45) कर्पूर मंजरी, पृ. 47
46) कर्पूर मंजरी, चतुर्थ अंक, पृ. 229
47) कथा सरित्सागर, खण्ड 1, पृ. 389
48) क
49) देवी भागवतपुराण, 5.17.15